शोध दिशा

ISSN 0975-735X

विश्वस्तरीय शोध-पत्रिका

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्य शोध पत्रिका

शोध अंक 52 | अक्टूबर-दिसंबर 2020 | 300.00 रुपए

संपादकीय कार्यालय
हिंदी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार,
बिजनौर 246701 (उ०प्र०)
फोन : 01342-263232, 07838090732
ई-मेल : shodhdisha@gmail.com
वेब साइट : www.hindisahityaniketan.com

क्षेत्रीय कार्यालय

हरियाणा
डॉ० मीना अग्रवाल
ए-402, पार्क व्यू सिटी-2 सोहना रोड,
गुड़गाँव (हरियाणा)
फोन : 0124-4076565, 07838090237

दिल्ली एन०सी०आर०
डॉ० अनुभूति
सी-106, शिवकला अपार्टमेंट्स
वी 9/11, सेक्टर 62, नोएडा
फोन : 09958010700

(सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।)

संपादक
डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

प्रबंध संपादक
डॉ० मीना अग्रवाल

संयुक्त संपादक
डॉ० शंकर क्षेम

उपसंपादक
डॉ० अशोककुमार 09557746346
डॉ० कनुप्रिया प्रचण्डिया

कला संपादक
गीतिका गोयल/ डॉ० अनुभूति

विधि परामर्शदाता
अनिलकुमार जैन, एडवोकेट

आर्थिक परामर्शदाता
ज्योतिकुमार अग्रवाल, सी०ए०

शुल्क
आजीवन (दस वर्ष) : व्यक्तिगत : पाँच हजार रुपए
संस्थागत : छह हजार रुपए
वार्षिक शुल्क : आठ सौ रुपए
यह प्रति : तीन सौ रुपए

प्रकाशित सामग्री से संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका से संबंधित सभी विवाद केवल बिजनौर स्थित न्यायालय के अधीन होंगे। शुल्क की राशि 'शोध दिशा' बिजनौर के नाम भेजें। (सन् 1989 से प्रकाशन-क्षेत्र में सक्रिय)

स्वत्वाधिकारी मुद्रक, प्रकाशक डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल द्वारा श्री लक्ष्मी ऑफसेट प्रिंटर्स, बिजनौर 246701 से मुद्रित एवं 16 साहित्य विहार बिजनौर (उ०प्र०) से प्रकाशित। पंजीयन संख्या : UP HIN 2008/25034

संपादक : डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल

परामर्श-मंडल

डॉ० सुधा ओम ढींगरा, 101, Guymon Court, Morrisville, NC-27560 USA
डॉ० सुरेशचंद्र शुक्ल, अध्यक्ष इंडो-नार्वेजियन सूचना एवं सांस्कृतिक मंच
प्रो० हरिशंकर आदेश, भारतीय प्राच्य विद्या संस्थान, कनाडा
प्रो० रामसजन पांडेय, कुलपति, बाबा मस्तराम विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)
प्रो० हरिमोहन, कुलपति, जे०एस० विश्वविद्यालय, शिकोहाबाद (फिरोजाबाद) उ०प्र०
डॉ० कमलकिशोर गोयनका, ए-98, अशोक विहार फ़ेज-1, दिल्ली 110052
प्रो० अशोक चक्रधर, जे-116, सरिता विहार, नई दिल्ली
प्रो० पूरनचंद टंडन, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो० नंदकिशोर पांडेय, हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज०)
प्रो० आदित्य प्रचंडिया, पूर्व आचार्य हिंदी विभाग, दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा
प्रो० बाबूराम, अध्यक्ष, हिंदी-विभाग, चौ० बंशीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी (हरियाणा)
डॉ० राजेंद्र मिश्र, 14/4 स्नेहलता गंज, इंदौर 452003 (म०प्र०)
प्रो० हरिमोहन बुधौलिया, पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष हिंदी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन
प्रो० आनंदप्रकाश त्रिपाठी, अध्यक्ष हिंदी अध्ययन मंडल, डॉ० हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
प्रो० अर्जुन चव्हाण, प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर (महा०)
डॉ० माया टाक, पूर्व प्रोफ़ेसर संगीत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज०)
प्रो० अनिलकुमार जैन, पूर्व प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज०)
प्रो० डॉ० सदानंद भोंसले, अध्यक्ष हिंदी विभाग, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे (महा०)
प्रो० शंभुनाथ तिवारी, हिंदी विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ०प्र०)
डॉ० योगेंद्रनाथ शर्मा 'अरुण', (पूर्व प्राचार्य) 74/3 नया नेहरूनगर, रुड़की (उत्तराखंड)
डॉ० अवनिजेश अवस्थी, हिंदी विभाग, पी०जी० डी०ए०वी० कालेज, नेहरू नगर, नई दिल्ली
प्रो० मंजुला राणा, अध्यक्ष हिंदी विभाग, हेमवती नंदन बहुगुणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर
प्रो० हनुमानप्रसाद शुक्ल, हिंदी विभाग, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
प्रो० चंद्रकांत मिसाल, प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग, एस०एन०डी०टी० महिला विद्यापीठ, पुणे (महा०)
डॉ० मुकेश गर्ग, पूर्व एसोसिएट प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो० जितेंद्र वत्स, प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया (बिहार)
डॉ० माला मिश्रा, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, अदिति कालेज (दिल्ली विश्व०), बवाना
डॉ० दिनेशकुमार चौबे, हिंदी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)
डॉ० शहाबुद्दीन शेख़, प्राचार्य, लोकसेवा कला व विज्ञान महा०, औरंगाबाद (महा०)
डॉ० महेशचंद्र, पूर्व एसोसिएट प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, मेरठ कॉलेज, मेरठ (उ०प्र०)
श्री राकेशकुमार दुबे, पत्रकारिता और जनसंचार विभाग, उड़ीसा केंद्रीय विश्वविद्यालय, कोरापुट (उड़ीसा)
डॉ० महेश दिवाकर, अध्यक्ष, अंतर्राष्ट्रीय हिंदी साहित्य एवं कला मंच, मुरादाबाद (उ०प्र०)
डॉ० अरुणकुमार भगत, अध्यक्ष, मीडिया अध्ययन विभाग, महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतीहारी (बिहार)

अनुक्रम

भारतीय बौद्ध शैलोत्खनित गुहाओं का सामाजिक-आर्थिक परिप्रेक्ष्य/ उपेंद्रकुमार 11

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में ग्रामीण स्त्री-जीवन का संघर्ष/ डॉ॰ जयप्रकाश यादव 16

मध्यकालीन साहित्य और गुरु जंभेश्वर/ डॉ॰ जी॰वी॰ रत्नाकर 24

भौतिकांतर सौंदर्य का अनुपम आख्यान है 'उर्वशी'/ डॉ॰ हरीश अरोड़ा 27

नरेंद्र कोहली के उपन्यास महासमर का पात्र शिखंडी अर्धपुरुष या अर्धनारी/ सुरेशकुमार 30

'असाध्य वीणा' में भारतीय दर्शन का संस्पर्श/ डॉ॰ मृदुल जोशी 34

उपन्यास-आलोचना का लोकतंत्र/ डॉ॰ उन्मेषकुमार सिन्हा 43

छायावाद का घोषणा-पत्र 'पल्लव'/ उदिप्त तालुकदार 51

रेणु की कहानियों का संसार/ डॉ॰ नीलू अग्रवाल 57

आजादी के नए अर्थ तलाशती : आजादी मेरा ब्रांड यात्रा-वृत्तांत का विश्लेषण/ स्मृतिरेखा नायक 62

साहित्यिक धारावाहिकों में चित्रित सामाजिक पक्ष/ डॉ॰ सुनीलकुमार साव 69

आईसीटी के दौर में अखबार/ शैव्यकुमार पांडेय 74

हिंदू-विवाह : परंपरा और बदलाव/ डॉ॰ नीना रंजन 80

केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में चित्रित किसान जीवन/ डॉ॰ दोड्डा शेपु बाबु 85

समकालीन हिंदी उपन्यास : वृद्धावस्था की त्रासदी/ आरती 89

हिंदी कहानियों में अभिव्यक्त जनजातीय समाज/ चिन्मय डेका 96

शैलेश मटियानी की रचनात्मकता एवं जीवन-संघर्ष/ डॉ॰ इवेलरी के॰ डुनाई 101

सुषम बेदी के उपन्यास-साहित्य में भारतीय प्रवासी मन का साक्षात्कार/ सबज़ार अहमद बट्टू 108

भारतीय राष्ट्रीयता की उत्पत्ति एवं विकास : एक सर्वेक्षण/ डॉ॰ कंचन कुमारी 112

शैलेश मटियानी के उपन्यासों में भाषिक सौंदर्य/ कल्पित चौधरी 115

रसखान के काव्य में प्रेम दर्शन/ डॉ॰ प्रणव शास्त्री 118

रचनाधर्मी कृष्णा सोबती: कहानी-लेखन एवं स्त्री-विमर्श/ डॉ॰ वीरेंद्रकुमार शर्मा 120

अजीत कौर द्वारा लिखित 'गौरी' उपन्यास में चित्रित सामाजिक यथार्थ/ फारूक अहमद 127

सफलता और सार्थकता के बीच की मारक प्रतियोगिता की कहानी/ डॉ॰ जयराम सूर्यवंशी 132

हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंधों में सौंदर्य विधायिनी दृष्टि/ डॉ॰ तमन्ना फातिमा 137

पटाखा : समकालीन हिंदी सिनेमा में मनोविज्ञान के नूतन प्रयोग/ डॉ॰ अजितसिंह तोमर 140

न्याय-व्यवस्था में पुलिस विभाग की भूमिका का अध्ययन : मेरठ जनपद के संदर्भ में/ रविकुमार पोसवाल, प्रो॰ संजीवकुमार शर्मा 145

निराला और नजरुल के साहित्य में किसान वर्गसंघर्ष-चेतना/ विजयकुमार साव 154

महर्षि दयानंद सरस्वती का हिंदी के विकास में योगदान/ डॉ॰ रामबाबू 162

प्रेमचंद और बाबुराव बागूल की कहानियों में समरसता बोध तुलनात्मक अध्ययन/ डॉ॰ दत्तात्रय फुके, डॉ॰ रोहिदास गवारे 168

मीरांबाई के काव्य में अभिव्यक्त वैयक्तिक स्वर/ भारती 179

राजस्थान की हिंदी कहानी में गुलेरी जी का मूल्यांकन/ सुनिता कुमारी, डॉ॰ विमलेश शर्मा 185

20वीं सदी का हिंदी यात्रा साहित्य : विविध पड़ाव और पड़ताल/ डॉ॰ नवीन नंदवाना 189

गुलाम मंडी में सिसकती तीसरी दुनिया/ प्रियंका कुमारी गर्ग 199

ज्ञानप्रकाश विवेक की ग़ज़लों में निहित धार्मिक चिंतन/ अनिल बाबुलाल सूर्यवंशी 206

संत नितानंद और उनका दार्शनिक-चिंतन/ डॉ॰ मुकेश कुमार 212

नारी-छवि : इतिहास और वर्तमान/ संगीता राव, प्रो॰ रामसजन पांडेय 218

ऐतिहासिक व पौराणिक जनश्रुतियों के आलोक में जम्मू कश्मीर/ डौली 223

पत्र विधा में कथाकार रघुनंदन त्रिवेदी के साहित्य संपृक्त पत्रों की भूमिका / डॉ॰ मीता शर्मा 231

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के निबंधों में युगचेतना/ डॉ॰ वीना सोनी 236

गिरीश पंकज : व्यंग्य अभिव्यक्ति के विविध आयाम/ चुन्नीलाल, डॉ॰ आर॰के॰ पांडेय 241

आधुनिक उपन्यासों में कुंठाग्रस्त जीवन का चित्रण/ सुधा महला 250

हिंदी कविता में आदिवासी चिंतन/ डॉ॰ संजय नाईनवाड 254

रमेशचंद्र शाह की कहानियों में सामाजिक जीवन यथार्थ/ बी॰एम॰ गिरिधरन, डॉ॰ बी॰ कामकोटी

दरमियाना की संघर्ष गाथा/ डॉ॰ विलास कांबले 265

उपासना का प्रयोजन/ डॉ॰ पवन सचदेवा 272

20वीं सदी का हिंदी यात्रा साहित्य : विविध पड़ाव और पड़ताल

डॉ॰ नवीन नंदवाना
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

यात्राएँ सेतु का कार्य करती हैं। ये परस्पर देश के विभिन्न भू-भागों व विदेशों की संस्कृतियों के मेल से स्नेह-संबंध और सौहार्द की स्थापना में अपनी महती भूमिका निभाती हैं। जीवन की एकरसता को सरसता में बदलने में यात्राओं की अहम भूमिका होती है। मनुष्य अपनी रोजमर्रा की जीवनप्रणाली से ऊब-सा जाता है। वह अपनी यंत्रवत् दिनचर्या से थोड़ी मुक्ति लेकर कुछ ताजगी और नएपन की खोज में निकल जाता है। यहीं से उसकी यात्रा का प्रारंभ होता है।

आदिमानव से लेकर वर्तमानयुग तक का मानव अपनी यायावर वृत्ति के कारण यात्राओं से सदैव जुड़ा रहा है। यायावर होना मनुष्य की स्वाभाविक वृत्ति है। प्रारंभ से ही मनुष्य अपनी रुचि व जरूरतों यथा-भोजन, आवास, सुरक्षा, व्यवसाय आदि के कारण यात्रा करता रहा है। समय के साथ-साथ यात्राओं के प्रयोजन बदलते गए। मानव-विकास की इस यात्रा में मानव ने अपनी जीवनचर्या में परिवर्तन किया। संसाधनों व तकनीक विकास के इस युग में यात्रा के प्रयोजन बदले और समसामयिक विकास ने यात्राओं को और भी सुगम बनाया।

यात्रा साहित्य से अभिप्राय उस वर्णन से है जिसमें कोई रचनाकार अपने द्वारा की गई किसी यात्रा का साहित्यिक शैली में वर्णन करता है। प्रत्येक यात्रा वर्णन को यात्रा साहित्य नहीं कहा जा सकता है। डॉ॰ धीरेंद्र वर्मा के साहित्य कोश में इस विधा पर विचार करते हुए स्पष्ट रूप से कहा गया है कि 'सौंदर्यबोध की दृष्टि से उल्लास की भावना से प्रेरित होकर यात्रा करने वाले यायावर एक प्रकार से साहित्यिक मनोवृत्ति वाले माने जा सकते हैं और उनकी मुक्त अभिव्यक्ति को यात्रा साहित्य कहा जा सकता है।'[1] धीरेंद्र वर्मा का मत है कि संसार के प्रमुख रूप से चर्चित यायावर अपनी स्वाभाविक वृत्ति से साहित्यिक थे। फाह्यान, ह्वेनसांग, इत्सिंग, इब्नबतूता और अलबरूनी आदि के नाम इस दिशा में लिए जा सकते हैं। यात्रा के विषय में बात करते हुए अपनी पुस्तक 'अरे यायावर रहेगा याद' में अज्ञेय लिखते हैं कि 'यायावर को भटकते हुए चालीस बरस हो गए, किंतु इस बीच न तो वह अपने पैरों तले घास जमने दे सका है, न ठाठ जमा सका है, न क्षितिज को कुछ निकट ला सका है।...उसके तारे छूने की बात ही क्या...यायावर ने समझा है कि देवता भी जहाँ मंदिरों में रुके कि शिला हो गए और प्राण संचार की पहली शर्त है- गति, गति, गति।'[2] वहीं अमृतलाल वेगड़ यात्रावृत्तांत पर विचार करते हुए लिखते हैं कि 'यात्रा तो अनेक करते हैं, लेकिन सभी यात्रावृत्तांत नहीं लिख पाते। आनंद लेना एक बात है और उस आनंद को व्यक्त कर पाना दूसरी बात है। ऐसा वे ही कर पाते हैं जिनके पास अनुभूति के साथ-साथ अभिव्यक्ति की सामर्थ्य भी हो, जिसे वाणी का वरदान प्राप्त हो, जिसके पास विस्मय की अमूल्य देन हो और जिसके पास कवि का संवेदनशील मन भी हो। ऐसे लोग जब लिखते हैं तो उनका यात्रावृत्तांत साहित्य की निधि बन जाता है।'[3]

यात्राओं के स्वरूप पर यदि हम दृष्टि डालें तो पाते हैं कि यात्राओं को मार्ग आधारित और विषयाधारित दो रूपों में बाँटा जा सकता है। मार्ग आधारित यात्रा में हम यात्रा के मार्ग और साधनों को आधार बनाते हैं। मार्ग या साधनों को देखने पर हम उसे स्थल, जल एवं वायुमार्ग की यात्राओं को इसमें सम्मिलित कर सकते हैं। स्थल यात्राएँ बस, कार और रेल आदि के माध्यम से संभव है। विषय आधारित यात्राओं में धार्मिक यात्राएँ, सांस्कृतिक यात्राएँ, साहित्यिक यात्राएँ, ऐतिहासिक यात्राएँ, भौगोलिक यात्राएँ और पशु-पक्षियों की यात्राएँ आदि को इस श्रेणी में लिया जा सकता है। इन विविध प्रकार की यात्राओं में रचनाकार देश-विदेश की प्रकृति और सौंदर्य चेतना के वैशिष्ट्य को अभिव्यक्ति देता है। रामचंद्र तिवारी का मत है कि 'यात्रावृत्त में देश-विदेश की प्राकृतिक रमणीयता, नर-नारियों के विविध जीवन-संदर्भ, प्राचीन एवं नवीन सौंदर्य-चेतना की प्रतीक कलाकृतियों की भव्यता तथा मानवीय सभ्यता के विकास के द्योतक अनेक वस्तुचित्र यायावर लेखक के मानस में रूपायित होकर वैयक्तिक रागात्मक ऊष्मा से दीप्त हो जाते हैं।'[4]

साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति हमें यात्रा साहित्य में भी रचनाकार के व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। अपनी यात्रा के महत्त्वपूर्ण बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए यात्रा लेखक उन्हें संवेदना की स्याही में भिगोते हुए लिखता है जिससे कि पाठक के हृदय पर उसकी छाप बनती जाती है। संवेदना की इसी भिन्नता के कारण हम पाते हैं कि एक ही स्थान की यात्रा का विवरण अलग-अलग लेखकों द्वारा लिखा जाने पर भी हम उसे समान नहीं पाते हैं। संवेदना की भिन्नता प्रत्येक लेखक में भिन्न-भिन्न होती है। इसी कारण प्रत्येक को पढ़ते हुए एक नया अनुभव होता है। इस दृष्टि से राहुल सांकृत्यायन अपना मत इस प्रकार व्यक्त करते हैं-'आज जिस प्रकार से घुमक्कड़ों को दुनिया की आवश्यकता है, उन्हें हर चीज इस दृष्टि से देखनी है, जिसमें कि घर बैठे रहने वाले दूसरे लाखों व्यक्तियों की आँख बन सके। इसलिए घुमक्कड़ को अपनी यात्रा आरंभ करने से पहले उस देश के बारे में कितनी ही बातों की जानकारी प्राप्त कर लेनी आवश्यक है।'[5]

वर्ण्यविषय को भी हम यात्रावृत्तांत के तत्त्वों में समाहित कर सकते हैं। यात्रावृत्त लेखक अपने साहित्यिक मान बिंदुओं को ध्यान में रखकर इस बात का चयन व विश्लेषण करता है कि यात्रा-वर्णन में किस बात को प्रमुखता से विवेचित करना है और किसे छोड़ना है। राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और प्राकृतिक आदि विषयों को अपने लेखन का विषय बनाकर वह अपने रचनाकर्म में संलग्न होता है। यात्रा वर्णन यूँ तो रचनाकार प्रमुख होता है और उसका व्यक्तित्व ही उभरकर आता है किंतु फिर भी उसे इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि लेखक के महत्त्वपूर्ण हो जाने के कारण यात्रा, यात्रा-स्थल और यात्रा के दौरान मिले व्यक्ति कहीं गौण न हो जाएँ। यात्रावृत्त लेखक को मंदिर, किलों, प्राकृतिक परिवेश, पर्यटन-स्थल, राजनेता, खेल-खिलाड़ी, साहित्यकारों और अन्य संबंधित विशिष्ट बातों का भी प्रमुखता से वर्णन करना चाहिए।

हम जिस स्थल की यात्रा पर जा रहे हैं, उसकी प्रकृति, परिवेश, भूगोल और अन्य महत्त्वपूर्ण बातों के बारे में पहले से जान लेना चाहिए। वहाँ की परंपरा, इतिहास और सांस्कृतिक

मूल्यों को पहले समझ लेना उस स्थान की यात्रा करने और उसके यात्रावृत्त लिखने में सहायक सिद्ध होता है। मेरा मत यह भी है कि ये जानकारियाँ केवल उस स्थान के बारे में पूर्व में ज्ञात ज्ञान व वहाँ के परिवेश व संस्कृति को समझने मात्र से है। रचनाकार को इन जानकारियों को अपने पर हावी नहीं होने देना चाहिए। उस स्थान को लेकर अब समय के साथ जो बदलाव आ गए हों, उन्हें भी स्पष्ट रूप से लिखा जाना चाहिए।

प्रत्येक यात्रा के पीछे यात्राकार का कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। हो सकता है कि यात्रा लेखक किसी स्थान की धार्मिक व सांस्कृतिक महत्ता को केंद्र में रखकर यात्रा कर रहा हो, जो साधारणतया किसी तीर्थस्थल से जुड़ाव रखती है। ऐसे में रचनाकार को उस स्थान की धार्मिक व सांस्कृतिक महत्ता को केंद्र में रखना होगा। वहाँ के लोकजीवन, परंपरा और विश्वासों को भी ठीक से समझना उसकी यात्रा का एक प्रमुख उद्देश्य होगा। यात्रा लेखक उस स्थान के साहित्य, लोकसंस्कृति व भाषा को अपना उद्देश्य बनाकर भी यात्रा कर सकता है। वह वहाँ के प्रकृति, परिवेश, भूगोल व पर्यावरण के वर्णन को भी अपना ध्येय बना सकता है। पुरातत्त्व व पर्यटन को भी यात्रा वर्णन का केंद्रबिंदु बनाया जा सकता है।

यात्रा लेखक अपने यात्रा वर्णन के लिए कई शैलियों को अपना सकता है। उनमें आत्मकथात्मक शैली, निबंध या पत्र शैली, संस्मरण या रिपोर्ताज शैली और रेखाचित्र शैली में से किसी भी शैली को अपने लेखन में प्रयुक्त कर सकता है।

यात्रा साहित्य लेखक के व्यक्तित्व में घुमक्कड़ी का स्वभाव होना आवश्यक है। इसके बिना यात्रा एक बोझ-सी लगेगी और वह यात्रा वर्णन हृदयस्पर्शी नहीं बन पाएगा। यात्रावृत्तांत में वर्णन पर भी ध्यान दिया जाना परम आवश्यक है। यदि वर्णन उपयुक्त शैली में, प्रवाहमय और रुचि के अनुकूल नहीं होगा तो वह वर्णन पाठकों को आद्योपांत बाँधे रखने में सफल नहीं हो पाएगा। स्थानिकता को भी इस दिशा में महत्त्वपूर्ण माना जाता है। जिस स्थान की यात्रा का वर्णन है, वहाँ की स्थानिकता चाहे वह भाषा के स्तर पर हो या लोकजीवन के अन्यान्य विषयों से संबंधी हो, उसका पुट आना आवश्यक होता है। अन्यथा वह यात्रा-वर्णन उस स्थान के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करवा पाने में सक्षम नहीं होगा। कल्पना का समुचित समावेश भी यात्रा-वर्णन के लिए अनिवार्य माना जाता है। कल्पनाशून्यता उसे साहित्यिक नहीं बना पाएगी और कल्पना की अतिशयता उसे यथार्थ से दूर ले जाएगी। अतः कल्पना के समुचित संयोजन पर ध्यान दिया जाना आवश्यक होता है।

तथ्यपरकता और विश्वसनीयता को भी हम यात्रा वर्णन की अन्य विशेषताओं के रूप में स्वीकार कर सकते हैं। यदि किसी ऐतिहासिक स्थल की यात्रा का वर्णन किया जा रहा हो तो यात्रा लेखक को उस स्थान विशेष से जुड़े तथ्यों का वर्णन बहुत ही विश्वसनीयता से करना चाहिए। अन्यथा वह यात्रावृत्त उतना स्वीकार्य नहीं हो पाएगा। समसामयिकता को भी उस वर्णन में अवश्य समाहित करना चाहिए। लेखक को ध्यान में रखना होगा कि किसी स्थान-विशेष का वैसे तो पुराकाल में बहुत महत्त्व रहा है। वर्तमान में उसके समक्ष क्या चिंताएँ और चुनौतियाँ हैं, उसे भी अपने वर्णन में शामिल करना चाहिए।

चित्रात्मकता और संवेदनशीलता भी किसी अच्छे यात्रावृत्त के लिए आवश्यक है। यात्रा वर्णन की पहली शर्त यह होती है कि वर्णन ऐसा हो कि पाठक उसे पढ़ते हुए इतना मग्न हो जाए

ISSN 0975-735X

कि वह यह महसूस करने लगे कि उसने उस स्थान विशेष की यात्रा कर ली है, तभी वह एक सफल यात्रावृत्त कहलाने का हकदार होगा और ऐसा वर्णन बिना संवेदनशीलता के संभव नहीं होगा। यात्रावृत्त लेखक को समुचित विस्तार से ही अपनी बात कहनी चाहिए इसलिए उसे संक्षिप्तता का भी ध्यान रखना होगा। उसे ध्यान रखना होगा कि कितना बड़ा लेख पाठक के लिए उपयोगी होगा और वह पाठकों को आखिर तक बाँधे रख सकेगा। एक सफल यात्रा वर्णन में मानवीय मूल्यों और सांस्कृतिक वैशिष्ट्य का पक्ष प्रमुखता से उभरकर आना चाहिए। यदि यात्रा विदेश की है तो परस्पर सद्भाव और सहभाव एवं मैत्री के भाव संचरित हों, आपस में बंधुत्व के भाव जगें, इस बात को भी ध्यान में रखना होगा। इन समस्त बातों को समाहित करने वाले वर्णन को ही हम एक अच्छा यात्रावृत्त कह सकते हैं।

यात्रा सदा से ही मनुष्य की रुचि का विषय रही है। आदि-अनादिकाल से ही हम मनुष्य को यात्रा करता पाते हैं। यदि हम आदि ग्रंथ ऋग्वेद की बात करें तो उसके अंगों (1-25/7, 1-47/3, 3-56/2, 7-88/3, 1-116/3) व संहिताओं (काठक संहिता 37/14, ऐतरेय ब्राह्मण 7/14, महाभारत तीर्थ पर्व अ॰ 83) में यात्रा के संकेत प्राप्त होते हैं। इस वैदिकयुग में व्यापारी, तीर्थयात्री, साधु-संन्यासी, विद्यार्थी और अन्य ज्ञान पिपासु विद्वानों के यात्रा के वर्णन मिलते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण का मंत्र 'चरैवेति-चरैवेति' तो सदैव गतिमान रहने का संकेत ही देता है। रामकथा (रामायण और रामचरितमानस आदि) में तो राम-लक्ष्मण और जानकी की वनयात्रा का बहुत ही बड़ा और हृदयस्पर्शी वर्णन मिलता है। महाभारत में भी यात्रा के कई वर्णन हैं जिसमें पांडवों की वनवास यात्रा के वर्णन भरे पड़े हैं।

बुद्ध, महावीर और शंकराचार्य की यात्राओं से भी हम भलिभाँति परिचित हैं। वल्लभाचार्य, रामानंद और चैतन्य महाप्रभु की यात्राएँ भी हम जानते हैं। युद्ध, व्यापार, धर्मप्रचार और साम्राज्य विस्तार के लिए की गई यात्राओं के वर्णन (मुगलों और ब्रिटिशों) हम भारतीय इतिहास में देख सकते हैं। बात यदि मध्यकाल की हो तो हम देखते हैं कि गोस्वामी विट्ठलनाथ जी द्वारा रचित 'वनयात्रा' (1600 वि॰सं॰) को पहली हस्तलिखित यात्रावृत्त कोटि की रचना मानी जा सकती है। इसमें लेखक ने ब्रजमंडल के स्थानों की यात्रा का वर्णन किया है। इसी दौर में श्रीमती जीमन जी द्वारा रचित 'वनयात्रा' (1609 वि॰सं॰), सेठ पद्मसिंह की यात्रा (1700 वि॰सं॰) 'बात दूर देश की' (1886 सं॰), अयोध्यासिंह बख्तावरसिंह की पत्नी की 'बद्रीनाथ कथा' (1888 सं॰), रामसहायदास की वनयात्रा परिक्रमा (1891 सं॰), ब्रज चौरासी कोस (1900 सं॰) और बद्रीनारायण सुगम यात्रा (1966) और पंडित वाचस्पति शर्मा 'चेत' के ग्रंथ इस विधा के आरंभिक हस्तलिखित ग्रंथ हैं।

भारतेंदु युग-यदि बात साहित्यिक यात्रा वर्णनों की हो तो कहा जा सकता है कि इस विधा की विधिवत शुरुआत भारतेंदुयुग से ही होती है। इस काल में स्वयं भारतेंदु हरिश्चंद्र और भारतेंदु मंडल के सदस्यों ने इस दिशा में अपनी कलम चलाई। भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा रचित यात्रावृत्तों में 'सरयू पार की यात्रा', 'लखनऊ की यात्रा' और 'हरिद्वार की यात्रा' जैसे यात्रावृत्त उल्लेखनीय हैं। ये यात्रावृत्त उनकी पत्रिका 'कविवचनसुधा' में 1871 से 1879 के मध्य प्रकाशित हुए। इसी कालखंड में बालकृष्ण भट्ट ने 'गया यात्रा' और प्रतापनारायण मिश्र ने 'विलायत यात्रा' नामक यात्रावृत्तों की रचना की जो कि हिंदी प्रदीप में प्रकाशित हुए। पुस्तक रूप में भी इस युग में

ISSN 0975-735X

यात्रावृत्त लिखे गए। श्रीमती हरदेवी का 'लंदन यात्रा' (1883) जो कि ओरियंटल प्रेस, लाहौर से प्रकाशित हुआ, इसे इस विधा का प्रथम ग्रंथ माना जा सकता है। दामोदर शास्त्री का 'लंदन का यात्री' (1884) और तोताराम वर्मा का 'मेरी पूर्व दिग्यात्रा' (1885) भी पुस्तक रूप में प्रकाशित यात्रावृत्तों में उल्लेखनीय हैं। इस कालखंड में भारतीय तीर्थ स्थलों को केंद्र में रखकर यात्रा वर्णन लिखे गए। वहीं विदेशों को केंद्र बनाकर लिखे गए यात्रावृत्तों में लंदन यात्रा रचनाकारों की कलम का विषय बनी रहीं।

द्विवेदीयुग–द्विवेदीयुग में इस विधा को लेकर रचनाकर्म में वृद्धि हुई। सत्यदेव परिव्राजक इस कालखंड के रचनाकारों का एक चर्चित नाम है। 'उनकी तीन कृतियाँ उपलब्ध होती हैं– 'अमेरिका दिग्दर्शन' (1911), 'मेरी कैलाश यात्रा' (1915) तथा 'अमेरिका भ्रमण' (1916)। 'अमेरिका दिग्दर्शन' तथा 'अमेरिका भ्रमण' में लेखक ने अमेरिका की सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक स्थिति तथा वहाँ के दर्शनीय स्थलों का औपन्यासिक शैली में वर्णन किया है। 'मेरी कैलाश यात्रा' में लेखक ने काठगोदाम से तिब्बत तक की यात्रा के विवरण प्रस्तुत किए हैं। कैलाश मानसरोवर तथा हिमालय के मनमोहक प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण इस कृति की उल्लेखनीय विशेषता है। समग्रत: यह कहा जा सकता है कि द्विवेदीयुग में लिखी गई यात्रावृत्त संबंधी रचनाओं ने न केवल पीछे से चली आती हुई परंपरा को जीवित बनाए रखा अपितु भावी विकास की दिशा में भी मूल्यवान योग दिया।[५] इस कालखंड में स्वामी मंगलानंद, श्रीधर पाठक और लोचनप्रसाद पांडेय ने भी यात्रा वर्णनों की रचना की। श्रीधर पाठक द्वारा रचित यात्रावृत्त 'मर्यादा' के जून से सितंबर 1913 के अंक में 'देहरादून-शिमला यात्रा' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। गोपालराम गहमरी का यात्रावृत्त 'लंका यात्रा का विवरण' (1916) शीर्षक से पुस्तक रूप में प्रकाशित हुआ। ठाकुर गदाधरसिंह ने 'चीन में तेरह मास' (1902) और 'हमारी एडवर्ड तिलक यात्रा' शीर्षक से यात्रा वर्णन प्रकाशित कराए।

छायावादीयुग–छायावादीयुग में यात्रा-वृत्तांत लेखन ने और गति पकड़ी। इस कालखंड में रामनारायण मिश्र, गणेशनारायण सोमानी, सत्यदेव परिव्राजक, जवाहरलाल नेहरू, राहुल सांकृत्यायन और सेठ गोविंददास आदि ने यात्रा-वृत्तांतों की रचना की। इस युग के प्रधान यात्रा वृत्तांतकारों में सत्यदेव परिव्राजक और राहुल सांकृत्यायन के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सत्यदेव परिव्राजक ने 'मेरी जर्मन यात्रा' (1926), 'यात्री मित्र' (1936), 'यूरोप की सुखद स्मृतियाँ' (1937), 'ज्ञान के उद्यान में' (1937), 'नई दुनिया के मेरे अद्भुत संस्मरण' (1937), 'अमेरिका प्रवास की मेरी अद्भुत कहानी' (1937) नामक कृतियों की रचना की। 'मेरी जर्मन यात्रा में जहाँ जर्मनी के प्राकृतिक सौंदर्य का निरूपण है। वहीं 'यूरोप की सुखद स्मृतियाँ' में संबद्ध यात्रा वर्णन के साथ-साथ प्रकारांतर से भारत के स्वतंत्र होने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया है। 'यात्री मित्र' में यात्रा में आने वाली कठिनाइयों का वर्णन करते हुए लेखक ने अपने यात्रा अनुभव को अत्यंत रोचक शैली में प्रस्तुत किया है। निबंधात्मक शैली में लिखित 'ज्ञान के उद्यान में' पुस्तक में लेखक ने ऐसे 40 निबंध संकलित कर दिए हैं जो उन्होंने अपनी यात्राओं के समय विभिन्न पत्रिकाओं में लिखे थे। 'नई दुनिया के अद्भुत संस्मरण' तथा 'अमेरिका प्रवास की मेरी अद्भुत कहानी' में स्वामी जी ने अमेरिका की शिक्षा-पद्धति, प्राकृतिक वैभव, सामाजिक-राजनीतिक जीवन तथा वहाँ के दर्शनीय स्थानों का कथात्मक शैली में वर्णन किया है।'

यात्रावृत्तांत लेखन की दिशा में राहुल सांकृत्यायन अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। छायावादी कालखंड में उनमें कुछ यात्रावृत्त संग्रह प्रकाशित हुए, जिनमें 'तिब्बत में सवा वर्ष' (1933), 'मेरी यूरोप यात्रा' (1935), 'मेरी तिब्बत यात्रा' (1937) प्रमुख हैं। तिब्बत से जुड़े यात्रा वर्णनों में राहुल जी ने वहाँ की प्रकृति व जीवन का वर्णन करने के साथ-साथ वहाँ खोजे गए ग्रंथों का भी उल्लेख किया है। यूरोप यात्रा वर्णनों में उन्होंने यूरोप के विभिन्न स्थलों के वर्णन के साथ-साथ वहाँ के केंब्रिज और ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के बारे में भी लेखन किया है। राहुल जी के यात्रावृत्तों का स्मरण करते हुए जानकी पांडे ने लिखा है कि 'राहुल को गुजरे तीन दशक हो गए परंतु इतिहास नई करवट लेने के लिए जिस भूमि पर जगह बना रहा है उसकी पृष्ठभूमि निश्चय ही राहुल ने तैयार की है। राहुल ने अतीत को राग का साधन बनाया। यायावर राहुल ने अपने जीवन में साहित्य के विकास और उसके सुसंबद्ध इतिहास के लिए जो कुछ भी कहा, वह किया भी। प्रत्येक मोड़ पर मनुष्य की सोच को सुस्थिर प्रतिमान देनेवाले भारत के लिए उनके समग्र चिंतन की सदा प्रासंगिकता रहेगी। भाषा और साहित्य, कला और संस्कृति, इतिहास और पुरातत्व, धर्म और राजनीति, अध्यात्म और दर्शन आदि को साथ-साथ लेकर चलने वाले इस महापंडित का अद्भुत व्यक्तित्व विलक्षणताओं के संगम पर आज भी अपने विराट रूप में मील का पत्थर बना हुआ प्रतिष्ठित है।'[६] इस कालखंड में पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा रचित यात्रावृत्त 'रूस की सैर' (1929) नाम से प्रकाशित हुआ। इस प्रकार इस कालखंड में विदेश यात्रा को आधार बनाकर भी लेखकों ने अपनी कलम चलाई।

छायावादोत्तरयुग–छायावादोत्तर कालखंड में इस विधा में बहुत काम हुआ। यह युग इस विधा का प्रौढ़युग कहा जा सकता है। वैविध्य, परिमाण एवं रचना शिल्प सभी दृष्टियों से यह कालखंड अपना विशेष महत्त्व रखता है। आजादी के बाद विदेशों की यात्रा के अवसर और भी बढ़े। विविध राजनीतिक-सांस्कृतिक कारणों के साथ-साथ अध्ययन-अध्यापन, व्यापार आदि को लेकर भी यात्राएँ अधिक होने लगीं। इस कालखंड में राहुल सांकृत्यायन, सत्यदेव परिव्राजक, कन्हैयालाल मिश्र, सेठ गोविंददास और पंडित जवाहरलाल नेहरू आदि ने यात्रावृत्त विधा को नूतन गति दी।

रूस के साथ अच्छे संबंधों के कारण लोगों ने रूस की यात्राएँ खूब की और इसी कारण रूस को लेकर खूब यात्रा वृत्तांत लिखे गए। राहुल सांकृत्यायन ने 'रूस में पच्चीस मास' (1952), जवाहरलाल नेहरू का 'आँखों देखा रूस' (1953), यशपाल का 'लोहे की दीवार के दोनों ओर' (1953), बनारसीदास चतुर्वेदी का 'रूस की साहित्यिक यात्रा' (1962), डॉ॰ नगेंद्र का 'तंत्रालोक से यंत्रालोक तक' (1968) और लक्ष्मीदेवी चुंडावत का 'हिंदू कुश के उस पार' (1966) ने रूस केंद्रित यात्रा वृत्तांत लिखे। 'तंत्रालोक से यंत्रालोक तक' में डॉ॰ नगेंद्र ने अपनी पैनी आलोचनात्मक दृष्टि के माध्यम से रूस के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक परिवेश का अध्ययन करते हुए उसे विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है।[७]

इस कालखंड में चीन व जापान यात्रा विवरणों का भी उल्लेख मिलता है। राहुल सांकृत्यायन ने 'चीन में कम्यून' (1959) व 'चीन में क्या देखा' (1960) नामक यात्रा-संग्रहों की रचना की। राहुल जी ने 'राहुल यात्रावली', 'यात्रा के पन्ने', 'एशिया के दुर्लभ भूखंडों में' (1956) नामक संग्रह में प्रकृति व परिवेश का व्यापक वर्णन किया है। यात्राओं के विषय में

राहुल जी का मत है कि 'घुमक्कड़ी एक रस है, जो काव्य रस से किसी तरह भी कम नहीं है। कठिन मार्गों को तय करने के बाद नए स्थानों पर पहुँचकर हृदय में जो भावोद्रेक पैदा होता है, वह एक अनुपम चीज है। उसकी कविता के रस से हम तुलना कर सकते हैं और यदि कोई ब्रह्मपरक विश्वास रखता हो तो वह उसे ब्रह्म समझेगा। जैसे रसो वै सः रसं हि लब्ध्वा आनंदी भवति:।"[10]

सेठ गोविन्ददास ने 'सुदूर दक्षिण पूर्व' में सिंगापुर, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और फीजी की यात्राओं के वर्णन किए। वहीं 'पृथ्वी परिक्रमा' (1954) में फ्रांस, कनाडा, अमेरिका, यूनान, इटली, चीन और जापान आदि देशों की यात्राओं का वर्णन किया। रामवृक्ष बेनीपुरी ने 'पैरों में पंख बाँधकर' (1952) तथा 'उड़ते चलो-उड़ते चलो' (1954), यशपाल ने 'राह बीती' (1956) में विभिन्न देशों की यात्राओं के रोचक वर्णन किए। रामधारीसिंह दिनकर ने 'देश-विदेश' (1957), 'मेरी यात्राएँ' (1970) नामक ग्रंथों में भारत के साथ-साथ विदेश यात्राओं के अद्भुत वर्णन किए। राम, पेरिस और बर्लिन आदि के वर्णन अज्ञेय ने 'एक बूँद सहसा उछली' (1960) में किए। गोपालप्रसाद व्यास ने 'अरबों के देश में' (1960), प्रभाकर माचवे ने 'गोरी नजरों में हम' (1969), निर्मल वर्मा ने 'चीड़ों पर चाँदनी' (1964), विष्णु प्रभाकर ने 'हँसते निर्झर-दहकती भट्टी' (1966), रामेश्वर टाटिया ने 'विश्व-यात्रा के संस्मरण', डॉ॰ नगेंद्र का 'अप्रवासी की यात्राएँ' (1972), राजेंद्र अवस्थी ने 'सैलानी की डायरी' (1977) तथा गोविंद मिश्र ने 'धुंध भरी सुर्खी' (1979), शिवानी ने 'यात्रिक' (1980) नाम से अपने यात्रानुभवों को साहित्यिकता प्रदान करते हुए अभिव्यक्त किया।

इस अवधि में स्वदेश यात्रा को लेकर भी बहुत कुछ लिखा जाता रहा है। हमारे देश का प्राकृतिक वैभव, सांस्कृतिक वैशिष्ट्य, भौगोलिक परिवेश व जनजीवन से जुड़ी विशेषताओं की दृष्टि से इतना समृद्ध है कि व्यक्ति जीवनभर भी देश के अलग-अलग क्षेत्रों में घूमता रहे तो भी उसे कभी अरुचि नहीं होती है। भारतीय धर्म, दर्शन, समाज और संस्कृति के साथ-साथ हिमालय के प्राकृतिक वैभव को केंद्र बनाकर विष्णु प्रभाकर ने 'ज्योतिपुंज हिमालय' (1982) नामक ग्रंथ लिखा। इसी कालखंड में राहुल जी ने 'किन्नर देश में', 'दार्जिलिंग परिचय' की रचना की। अज्ञेय का 'अरे यायावर रहेगा याद' भी यहाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। जितनी विशिष्टता हमें अज्ञेय के काव्य और कथा साहित्य में मिलती है, वैसा ही वैशिष्ट्य उनके कथेतर साहित्य विशेषतया यात्रा साहित्य में द्रष्टव्य होता है। विवेच्य कृति में अज्ञेय का ध्यान केवल बाहरी परिवेश पर ही केंद्रित नहीं रहा बल्कि पहाड़ी जीवन की बिडंबनाओं के फलस्वरूप मानस-पटल पर उभरने वाले प्रश्नों को भी प्रमुखता से वर्णित किया है। जे॰ आत्माराम अपने लेख 'अज्ञेय संस्कृति दृष्टि और अरे यायावर रहेगा याद' में लिखते हैं कि 'निश्चित ही अज्ञेय अपने यात्रावृत्तांतों के माध्यम से भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग-मिथकों, पौराणिक कथाओं को उत्कीर्णित करते हैं, जो सैकड़ों वर्षों से हमारी वाचिक और साहित्यिक परंपरा में किसी-न-किसी रूप में विद्यमान रहे हैं।...अज्ञेय ने इस कृति में बिना किसी लाग लपेट के संस्कृति, समाज और सभ्यता पर बेबाक विचार रखते हुए समग्र भारत की सांस्कृतिक विशेषताओं को प्रकाश में लाने का प्रयास किया है।"[11]

मोहन राकेश द्वारा 'आखिरी चट्टान तक' (1953) भारतीय जीवन का यथार्थ का अंकन करता है। डॉ. रघुवंश का 'हरी घाटी' (1961), काका कालेलकर का 'हिमालय की यात्रा' (1948), 'सूर्योदय का देश' (1955) चर्चित रचनाएँ हैं। 'हरी घाटी' में रघुवंश ने हजारीबाग

यात्रा को पूरी संवेदना के साथ वर्णित किया है तो 'हिमालय यात्रा' और 'सूर्योदय का देश' में क्रमशः भारतीय तीर्थों और जापान यात्रा का वर्णन है। ध्यान देने योग्य यह है कि 'प्रवृत्यात्मक दृष्टि से हिंदी के यात्रावृत्त-संबंधी साहित्य का मूल्यांकन करने पर ज्ञात होता है कि विदेश भ्रमण-संबंधी ग्रंथों की तुलना में भारत भ्रमण-संबंधी ग्रंथ कम प्रकाशित हुए हैं। वस्तुतः मनुष्य में विदेशों में भ्रमण कर वहाँ के अद्भुत दृश्यों, पदार्थों, प्रथाओं, जीवनमूल्यों आदि को देखने-समझने की जितनी तीव्र इच्छा होती है, उतनी अपने देश में भ्रमण करने की नहीं होती। पाठक भी भारत भ्रमण-संबंधी रचनाओं की अपेक्षा विदेश भ्रमण-संबंधी रचनाओं के अध्ययन में ही अधिक प्रवृत्त होता है लेकिन इतना होते हुए भी हिंदी में भारत भ्रमण-संबंधी अनेक रचनाएँ प्रकाशित एवं लोकप्रिय हुई हैं। इसका कारण यह है कि देश के भू-भागों में रहने वाले व्यक्तियों की वेशभूषा, रहन-सहन आदि में विभिन्नता, वन्य प्रदेशों एवं पर्वतमालाओं की चित्ताकर्षक प्राकृतिक सुषमा तथा विस्तृत भौगोलिक सीमाएँ विदेशियों को ही नहीं, अपितु देशवासियों को भी सदैव अपनी ओर आकर्षित करती रही हैं।"[12]

शिल्प व शैली के वैशिष्ट्य को ध्यान में रखकर यदि यात्रावृत्तों की बात की जाए तो भगवतशरण उपाध्याय, महावीरप्रसाद पोद्दार आदि ने 'कलकत्ता से पीकिंग' और 'हिमालय की गोद में' जैसे यात्रावृत्त पत्र शैली में लिखे। वहीं सेठ गोविंददास, रामवृक्ष बेनीपुरी, राहुल सांकृत्यायन और डॉ॰ रघुवंश ने क्रमशः 'सुदूर दक्षिण पूर्व', 'पैरों में पंख बाँधकर', 'रूस में पच्चीस मास' और 'हरी घाटी' की रचना में डायरी शैली का प्रयोग किया। 'एक बूँद सहसा उछली' (अज्ञेय), 'हँसती घाटी दहकते निर्झर (विष्णु प्रभाकर) और 'चीड़ों पर चाँदनी' (निर्मल वर्मा) में साक्षात्कार शैली की सहायता ली गई है।

20वीं सदी के आखिरी दो दशक–20वीं सदी के आखिरी दो दशकों में भी इस विधा में कई चर्चित रचनाएँ आईं। विष्णु प्रभाकर इस दिशा में एक चर्चित नाम रहा। उन्होंने विगत दो-तीन दशकों में 'ज्योतिपुंज हिमालय' (1982), 'राह चलते-चलते' (1985), 'हिमशिखरों की छाया में' (1988), 'आकाश एक है' (1998) और 'संपूर्ण यात्रावृत्त' (1999) शीर्षक से यात्रावृत्तांतों की रचना की। कथाकार गोविंद मिश्र ने 'दरख्तों के पार शाम' (1983), 'झूलती जड़ें '(1990) और 'परतों के बीच' (1997) शीर्षक से यात्रावृत्त लिखे। राजेंद्र अवस्थी ने 'हवा में तैरते हुए' (1986), 'दुनिया के अजनबी दोस्त' (1996), शिवानी का 'यात्रिक' (1981), 'चरैवेति-चरैवेति' (1987), रामदरश मिश्र का 'तना हुआ इंद्रधुनष' (1989), 'भोर का सपना' (1993) और 'पड़ोस की खुशबू' (1999) शीर्षक से यात्रावृत्त लिखे। वहीं देवेंद्र सत्यार्थी का 'सफरनामा पाकिस्तान' (1989), हिमांशु जोशी का 'सूरज चमके आधी रात' (1989), 'यात्राएँ' (1999), 'आत्मा की धरती' (1999), विवेकीराय का 'जगत् तपोवन सो कियो' (1991), 'यात्रा-एक और हिंदी यात्रा' (1995), नरेश मेहता का 'साधु चले न जमात' (1991), धर्मवीर भारती का 'यात्रा-चक्र' (1994), पुष्पा भारती का 'सफर सुहाने' (1994), पद्मा सचदेव का 'मैं कहती हूँ आखिन देखी' (1995), कमलेश्वर का 'कश्मीर रात के बाद' (1995), मंगलेश डबराल का 'एक बार आयोवा' (1996), श्रीलाल शुक्ल का 'अगली शताब्दी का शहर' (1996), शिवप्रसाद सिंह का 'सब्जपत्र कथा कह' (1996), विद्यानिवास मिश्र का 'यात्राओं की यात्रा' (1996), निर्मल वर्मा का 'धुंध से उठती धुन' (1997), कुसुम अंसल का 'स्मृतियों का अतीत'

(1998), रमेशचंद्र शाह का 'बहुवचन' (1998) और 'एक लंबी छाँह' (2000), अमृतलाल वेगड़ का 'सौंदर्य की नदी नर्मदा' (1992) और विश्वनाथ प्रसाद तिवारी का 'आत्मा की धरती' (1999) उल्लेखनीय हैं। '1953 के पहले के यात्रा-साहित्य तथा 1952 के बाद के यात्रा साहित्य में सहसा बड़ा परिवर्तन आ जाता है। लगता है कि सिंह सहसा पिंजड़े के बाहर अपने अरण्य राज्य में आ गया है। जैसे मन-बुद्धि कहीं किसी अदृश्य बेड़ी से बँधे थे, उनकी बेड़ियाँ कट गई हैं। जनमानस की तथा लेखकों की साहित्यिक मानसिकता में एक अभूतपूर्व उल्लास, आत्मविश्वास, देशप्रेम की खोज, आत्मसम्मान और इन सबसे मिलकर उत्पन्न हुई रचनात्मकता यात्रा-साहित्य में प्रकट होती है।"[13]

धर्मवीर भारती के यात्रा विवरण उनके यात्रा-चक्र (1994) नामक संग्रह तथा कुछ यात्रा-विवरण उनके संग्रह 'ठेले पर हिमालय' में संगृहीत हैं। 'ठेले पर हिमालय' तथा 'कूर्मांचल में कुछ दिन' शीर्षक से रचित यात्रा-विवरण में उन्होंने हिमालय के प्रति प्रेम को व्यक्त किया है। 'ठेले पर हिमालय' शीर्षक बहुत दिलचस्प है। इसमें लेखक ने हिमालय की गोद में बसे 'कौसानी' की यात्रा का विवरण प्रस्तुत किया है। हिमालय के असीम प्राकृतिक सौंदर्य को अपनी साहित्यिक भाषा में व्यक्त करते हुए भारती लिखते हैं कि 'हिमालय की शीतलता माथे को छू रही है और सारे संघर्ष, सारे अंतर्द्वंद्व, सारे ताप जैसे नष्ट हो रहे हैं। क्यों पुराने साधकों ने दैहिक, दैविक और भौतिक कष्टों को ताप कहा था और इसे शमित करने के लिए वे क्यों हिमालय जाते थे यह पहली बार मेरी समझ में आ रहा था।"[14] लेखक ने हिमालय के नैसर्गिक एवं अलौकिक सौंदर्य वर्णन में अपनी साहित्यिक प्रतिभा का भी परिचय दिया है। बीच-बीच में हास्य-व्यंग्य का पुट भी मिलता है।

'कूर्मांचल में कुछ दिन' नामक यात्रा-विवरण में भी प्रकृति के असीम सौंदर्य को अपनी कलम के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। हिमालय की बर्फीली चोटियाँ, वहाँ के फल-फूल और गुलाबी सेबों से लदे पेड़ों की कतारों के बीच होते हुए लेखक उस बँगले में पहुँच जाते हैं जहाँ कुछ दिन गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने भी बिताए थे। अपने इस निबंध को रोचक बनाने के लिए लेखक ने वहाँ की प्रसिद्ध लोककथा को आधार बनाया है। जुहो-जुहो की रट लगाती चिड़िया की दर्दभरी कथा हृदय पर गहन प्रभाव डालती है। भारती जी कहते हैं कि वह दर्द मात्र उस चिड़िया का नहीं है हम सभी का भी है। हमारे प्राण भी निर्मम परिस्थितियों में भटक रहे हैं और सुदूर हमें बार-बार बुलाता है—'और हम पूछते हैं—जुहो? और हमारी विवशताएँ, हमारे बंधन, हमारी सीमाएँ कर्कश स्वर में कहती हैं 'भोल-जाला'। और हम चुप हो जाते हैं। पर वह प्यास तो चुप नहीं होती। वह तो रटती जाती है जुहो! जुहो!"[15]

भारती के यायावर जीवन का परिचय देने वाला यात्रा-साहित्य का संग्रह 'यात्रा-चक्र' नाम से 1994 ई॰ में प्रकाशित हुआ, जिसकी भूमिका 'चक्रार्पण' में स्वयं भारती ने स्वीकारा है कि यात्राएँ, रोमांचक यात्राएँ उनके बचपन का ख्वाब थीं। सिंदबाद जहाजी और राबिन्सन क्रूसो उनके हीरो थे। उनका यह संग्रह 'यात्रा-चक्र' तीन खंडों में विभक्त है। पहले चक्र में इंग्लैंड, जर्मनी, इंडोनेशिया तथा मॉरीशस की यात्रा का वर्णन है। दूसरे चक्र को भारती ने 'युद्ध यात्राएँ-मुक्तक्षेत्र युद्ध क्षेत्र-युद्ध यात्रा-युद्धोपरांत' नाम दिया है तथा तीसरा खंड 'चीन : अर्वाचीन : प्राचीन' है।

हिंदी यात्रा साहित्य की इस विशाल संपदा पर दृष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि हिंदी का

यात्रा साहित्य अन्य विधाओं के साहित्य की भाँति अपनी विशेष महत्ता रखता है। कविता और कथासाहित्य की भाँति कथेतर साहित्य की इस विधा को भी हमें प्रमुखता से स्वीकार करना चाहिए। इस विधा में बहुत कुछ लिखा जा चुका है और अभी भी लिखा जा रहा है किंतु आज भी इसको लेकर अनंत संभावनाएँ विद्यमान हैं। हिंदी जगत् को इन कथेतर विधाओं को केंद्र में लेते हुए अपनी कलम को नूतन गति देनी चाहिए। इस आलेख में यात्रा साहित्य के विशाल परिदृश्य को समेटने का प्रयास किया गया है फिर भी यह नहीं कहा जा सकता है कि हमने सभी को समाविष्ट कर लिया है। वैसे 20वीं सदी के आखिरी एक-दो दशकों व 21वीं सदी के प्रारंभिक इन दो दशकों में इस विधा को लेकर कई रचनाएँ आई हैं। उन पर अध्ययन, मनन और शोध की अपार संभावनाएँ हैं। समय के साथ हिंदी यात्रा साहित्य के स्वाद और संदर्भ में अंतर आया है। आज का यात्रा साहित्य कुछ भिन्न प्रकार का है और समय के साथ-साथ और भी बदलाव के लिए हमें तैयार रहना होगा।

संदर्भ

1. साहित्य कोश, संपादक धीरेंद्र वर्मा, ज्ञानमंडल, वाराणसी, 2013, भाग-1, पृ॰ 512
2. वही, पृ॰ 513
3. चरैवेति, चरैवेति, अमृतलाल वेगड़, सं॰ माधव हाड़ा, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2017, पृ॰ 78
4. हिंदी का गद्य साहित्य, रामचंद्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर, 1955, पृ॰ 146
5. घुमक्कड़शास्त्र, राहुल सांकृत्यायन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ॰ 11
6. हिंदी साहित्य का इतिहास, संपादक डॉ॰ नगेंद्र, मयूर पेपरबैक्स नोएडा, 2012, पृ॰ 509
7. वही, पृ॰ 579
8. राहुल सांकृत्यायन, घुमककड़शास्त्र और यात्रावृत्त, जानकी पांडेय, ज्ञानभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001, पृ॰ 6
9. हिंदी साहित्य का इतिहास, संपादक डॉ॰ नगेंद्र, मयूर पेपरबैक्स नोएडा, 2012, पृ॰ 820
10. घुमक्कड़शास्त्र, राहुल सांकृत्यायन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ॰ 89
11. अज्ञेय संस्कृति दृष्टि और अरे यायावर रहेगा याद, अपनी माटी, जे॰ आत्माराम, ई-पत्रिका, अंक 22, 5 अगस्त, 2016
12. हिंदी साहित्य का इतिहास, संपादक डॉ॰ नगेंद्र, मयूर पेपरबैक्स नोएडा, 2012, पृ॰ 825
13. हिंदी भाषा का साहित्य : एक विहंगम दृष्टि, विश्वमोहन तिवारी, आलेख प्रकाशन, दिल्ली, पृ॰ 69
14. ठेले पर हिमालय, धर्मवीर भारती, पृ॰ 5
15. वही, पृ॰ 10

ए-जी-9, रामेश्वरम् अपार्टमेंट, हनुमान नगर,
मनवाखेड़ा, उदयपुर (राजस्थान) 313003
मो॰ 09828351618, 09462751618
ईमेल : nandwana.nk@gmail.com